International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

माताप्रसाद के नाटकों में दलित चेतना तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

रोहित कुमार[1], डॉ. पुष्पेंद्र दुबे[2]

[1]शोधार्थी, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्)
[2]प्रोफेसर, महाराजा रणजीत सिंह महाविद्यालय इंदौर

Abstract

माताप्रसाद जी एक वरिष्ठ दलित साहित्यकार और भारतीय राजनेता थे, आपने अपने जीवनकाल में विभिन्न महत्वपूर्ण पद पर रहकर कार्य किया। आपका जन्म 11 अक्टूबर 1924 को उत्तर प्रदेश के जनपद जौनपुर के छोटे से शहर मछली शहर तहसील में हुआ। आपने अपनी प्रारंभिक शिक्षा दीक्षा मछली शहर से प्राप्त की इसके उपरांत गोरखपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य प्रास्नातक में परीक्षा पास की।

उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से दलित समाज की पीड़ा, संघर्ष और आत्मसम्मान को सशक्त स्वर दिया। वे सामाजिक न्याय, समानता और मानवाधिकारों के प्रबल समर्थक रहे। उनकी रचनाओं में दलित जीवन की यथार्थपरक झलक मिलती है, जिसमें शोषण, भेदभाव और सामाजिक विषमता के विरुद्ध स्पष्ट आक्रोश दिखाई देता है। माता प्रसाद ने साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का साधन माना। वे केवल लेखक ही नहीं, बल्कि एक जागरूक समाज सुधारक भी थे, जिन्होंने शिक्षा और संगठन के महत्व पर बल दिया। उनका साहित्य दलित जागृति को जागृत करने और समाज में समता की भावना विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान निभाया है।

माताप्रसाद जी ने अपना जीवन प्रारंभ एक अध्यापक के तौर पर शुरू किया लेकिन बाद में राजनीति के क्षेत्र में कदम रखा आप कांग्रेस पार्टी के सदस्य चुने गए, आप लगातार सन् 1957 से 1974 तक पांच बार जनपद जौनपुर की विधानसभा शाहगंज शीट से विधायक चुने गए। आपको सन् 1980 से 1992 तक उत्तर प्रदेश विधान परिषद का सदस्य भी नियुक्त किया गया।

आप अपने जीवन काल में राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण पदों पर आसीन रहे, जिसमें अरुणाचल प्रदेश के महामहिम राज्यपाल के पद पर वहीं उत्तर प्रदेश में राजस्व मंत्री के पद पर कार्य किए।

हिंदी दलित नाटकों में माता प्रसाद जी ने अपने नाटकों में दलित चेतना को प्रखर रूप से दिखाया।जिसमें समाज, वर्ग, वर्ण, के संघर्ष को अपने नाटकों के माध्यम से जागृत करने का प्रयास किया है। आपने अपने नाटकों में वही लिखा है जो आपने भोगा और अनुभव किया उसका यथार्थ चित्रण नाटकों में लिपिबद्ध किया है। जिसमें आने वाली भावी पीढ़ियों को उनके लिए एक मार्ग और बना रहे।

"जाति व्यवस्था के बीज ऋग्वेद के मंत्र 'ब्राह्मणेमुखं मातीद्' में ही पड़ गया था। वैदिक काल में सवर्णों में आपस में विवाह होते थे और इनमें गुण और कर्म के हिसाब से एक वर्ण का व्यक्ति दूसरे वर्ण में चला जाता था। जब आर्य अनार्य संघर्ष में अनार्य पराजित हो गये तो उन्हें दास बनाकर उनते कृषि, गोपालन और सेवा का कार्य लिया जाने लगा, और इनको चौथे वर्ण शूद्र में रख लिया गया। आर्यों अनार्यों के साथ रहने से उनमें अनुलोम और प्रतिलोम विवाह होने लगे। इस पर कुछ आर्य ऋषियों ने आर्यों के रक्त की शुद्धता बनाये रखने के लिए कुछ कठोर आचार संहिता बनाई। जिनमें शूद्रों और अतिशूद्रों के लिए बहुत ते नियम बनाये गये। जिनमें शिक्षा पर रोक, धार्मिक कार्यों पर प्रतिबन्ध, खान-पान में भेदभाव, आर्थिक, सामाजिक स्थिति अपमानजनक बनाना, जूठा खाना, उतरन पहनना, झोपड़ों में बस्ती से दूर बसाना आदि व्यवस्थाएं बनाई गई। वर्णव्यवस्था को धर्म से जोड़ देने से लोग आंख मूंदकर इसी व्यवस्था पर चलने लगे, जो एक परम्परा बन गई। बौद्ध काल में वर्णव्यवस्था और जाति व्यवस्था पर चोट की गयी जिससे कुछ समय के लिए यह व्यवस्था मृतप्राय हो गई"।1

"इस्लाम समतावादी धर्म है। इसके सिद्धान्तों से आकर्षित होकर पठानों और मुगलों के शासन में बहुत से हिन्दुओं, विशेषकर दलित और पिछड़ी जातियों ने इस्लाम धर्म अपनाया, किन्तु वहां भी वे जुलाहे, कुजड़े, कसाई, मेहतर, धोबी, नाई ही बने रहे। मुगल शासन में जब राजपूतों और मुगलों के बीच सम्बन्ध बढ़े, तो राजपूतों की घुसपैठ सत्ता और महल के भीतर तक हो गई। इसलिए हिन्दुईजम का प्रभाव सत्ता पर पड़ा और धर्म परिवर्तित दलितों और पिछड़ों को अछूत और पस्त कौम का दर्जा मिलकर ही रह गया। मध्यकाल में संत बासवेश्वर व कबीर, सन्त रैदास, गुरुनानक, चोखामेला, बंका, सदना कसाई, नामदेव आदि ने अपनी साखियों और भजनों द्वारा वर्ण, जाति, ऊंच-नीच की भावना का विरोध किया। अनपढ़ और गरीब जनता पर इसका अच्छा असर पड़ा। बहुत बड़ी संख्या में इनके समर्थक देश के विभिन्न भागों में फैल, गये, वे आडम्बर और पाखण्डों के विरोधी हो गये, किन्तु सवर्ण जातियों पर इसका बहुत कम असर पड़ा।

अंग्रेजों की देश में सत्ता स्थापित होने पर बहुत से दलितों को सेना में और कुछ स्थानों पर काम करने का अवसर मिला और उन पर शिक्षा न प्राप्त करने की बन्दिश हटा ली गयी, जिससे पिछड़ी और दलित

जातियों को पढ़ने का अवसर मिला। इसके फलस्वरूप समाज में पाखण्ड, भेदभाव, विधवाओं की दुर्गति, स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखना आदि बुराइयों को दूर करने के प्रयास शुरू हुए। इस प्रयास में बहुत से गैर दलित महापुरुषों ने भी योगदान दिया। जिनमें **दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गांधी, संतराम बी.ए., बोधानन्द महास्थाविर, रामास्वामी नायकर** आदि समाज सुधारकों का योगदान रहा। पिछड़े और दलित जातियों के भी कई महापुरुष इस क्षेत्र में आगे आये। इनमें ज्योतिबा फुले, साहू जी महाराज, सतनामी, घासीदास, सन्त गाडगे, स्वामी अछूतानन्द 'हरिहर', नारायणगुरु, डॉ. अम्बेडकर और जगजीवन राम के नाम लिए जा सकते हैं। इनके प्रयासों से दलितों में शिक्षा बढ़ी, उनमें जागृति और चेतना आई। अब दलित साहित्यकार इस कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं। दलितों में स्वाभिमान और स्वावलम्बन की भावना भर रहे हैं"2

"सदियों से शिक्षा, संपत्ति आदि से वंचित रखे गए दलितों को डॉ. आंबेडकर के लंबे संघर्ष के परिणामस्वरूप भारतीय संविधान में समान नागरिक अधिकार प्रदान किए गए तथा अनेक प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था उनके लिए की गई। इनमें संसद व राज्य विधानमण्डलों में प्रतिनिधित्व, शिक्षा व सरकारी नौकरियों में आरक्षण, फीस माफी, छात्रवृत्ति के अलावा बैंक व अन्य वित्तीय संस्थानों से स्वरोजगार की स्थापना हेतु ब्याजमुक्त ऋण, कृषि व आवास के लिए जमीन, इस जमीन को उपजाऊ बनाने व आवासीय भूमि पर आवास बनाने के लिए आर्थिक सहायता आदि प्रमुख हैं। ये समस्त सुविधाएं विभिन्न योजनाओं के तहत उपलब्ध हैं किंतु इन सुविधाओं का लाभ उनको बहुत कम हुआ है"।3

"आठवीं शताब्दी से ही भारत में इस्लाम धर्म में नव-दीक्षित उन्मादियों ने पश्चिमोत्तर से आक्रमण शुरू किया। इसमें जहां उनमें इस्लाम के प्रचार-प्रसार की भावना थी, वहीं लूट के माल भी पर्याप्त मात्रा में उन्हें उपलब्ध हो जाते थे। हिंदू समाज वर्ण व्यवस्था में बंटा था। इस व्यवस्था में ब्राह्मण सर्वोच्च था। व्यवस्था को मनुस्मृति के बताये मार्ग पर चलाया जाता था। ब्राह्मण सर्वोच्च और पूज्य था। पढ़ना-पढ़ाना, दर्शन-पूजन और धर्मग्रंथों की रचना और व्याख्या वही करता था। क्षत्रियों को देश का शासन और रक्षा का भार दिया गया। वैश्य व्यापार-व्यवसाय करता था। बहुसंख्यक शूद्र, जिनमें आज की दलित और पिछड़ी जातियां आती हैं, का कार्य सबकी सेवा और कृषि करना था। उन्हें शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था"।4

"हिंदू समाज की धर्मांधता, रूढ़िवादिता और अपने को श्रेष्ठ समझने की भावना से देश को होने वाले नुकसान की तरफ लोगों का ध्यान दिलाना है। कुछ लोग हिंदू धर्म से दूसरे धर्मों में गये लोगों को हिंदू धर्म में पुनः मिलाने की बातें तो करते हैं, किंतु उनसे जब रोटी-बेटी का संबंध कायम करने का प्रश्न आता है, तो वे कतरा जाते हैं। ऐसे अपमानित होने वाले लोग हिंदू धर्म को जड़-मूल से ही उखाड़ देने का प्रयास करते हैं। इसका उदाहरण यह नाटक है।

आज भी कुछ शंकराचार्य, (हिंदू धर्म के) तथाकथित शूद्रों को कुछ मंदिरों में जाने देने के विरोधी हैं। ऐसे लोग यदि हिंदू धर्म का विरोध करें या दूसरे धर्मों में जाने को विवश हों, तो इसकी ज़िम्मेदारी किसकी है, बताने की ज़रूरत नहीं। ऐसे रोड़े डालने वाले लोग राष्ट्र की एकता में सबसे बड़े बाधक हैं। इसलिए हमें बहुत सावधान रहना है। आज ऐसे धर्म स्थल की आवश्यकता है, जहां सभी धर्मों, जातियों के लोगों को जाने की आजादी हो, एक-दूसरे के धर्म आपस में सौहार्द्र पैदा करते हों, जाति के आधार पर कोई भेद-भावना न हो, तभी देश की एकता मज़बूत हो सकती है"5

"उत्तर भारत और विशेषकर उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, दिल्ली, हरियाणा के आगामी विधानसभा के चुनाव को लेकर सभी राजनीतिक दलों की सक्रियता को प्रस्तुत किया गया है। इसमें विभिन्न राजनीतिक दलों के कार्यक्रम, रीति-नीति उन्हीं दलों के नेताओं के भाषणों, प्रेस वार्ताओं और वक्तव्यों के आधार पर इसमें समायोजित कर बताया गया है। उनकी जो आलोचनाएं दूसरी पार्टियों द्वारा होती हैं उन्हें भी इसमें सम्मिलित करने का प्रयास किया गया है। इस नाटक में स्पष्टीकरण या प्रश्नों के माध्यम से विभिन्न राजनीतिक दलों के दलितों के संबंध में चुनावी एजेंडे को बताने का भी प्रयास किया गया है"।6

"भंगी जाति प्राचीन काल में एक बहादुर और लड़ाकू जाति रही है। इतिहास कहता है कि कई हजार साल पहले देश के मूलनिवासी अनार्य द्रविड़ और नाग कहे जाते थे, वे अच्छी खेती और व्यवसाय, व्यापार करते थे, चार हजार वर्ष पूर्व गोरे रंग के घुड़सवारों ने बड़ी संख्या में इन पर हमला कर दिया। इनको पराजित कर इनकी जर, जोरू और जमीन उन्होंने छीन ली, इन्हें गुलाम बना लिया। लेकिन पराजित होने पर भी ये लोग आने वाले गोरों की, जिन्हें आर्य कहा जाता है उनकी व्यवस्था का विरोध करते रहे"।7

"आजादी के बाद भी जगह जगह विकास होने पर जनजातियों को विस्थापन का दर्द झेलना पड़ा। उनका समुचित पुनर्वास न होने से वे परेशान हुए और उनमें से कुछ नक्सलवादियों के जाल में फंस गए, जो भारत में अशांति पैदा करने के कारण बन रहे हैं।

अन्त में एकलव्य के साथ प्राचीन काल में हुए अन्याय के बदले एकलव्य के नाम से धनुर्विद्या के खेलों में एक पुरस्कार देने की मांग की गई है जिससे एकलव्य वंशजों को कुछ संतोष हो"।8

'दलित' शब्द राजनीति एवं साहित्य के क्षेत्र में काफी चर्चित बन गया है। पहले दलित वर्ग के अन्तर्गत केवल हरिजन, अस्पृश्य एवं पिछडे वर्ग की ही नहीं अपितु सामाजिक रुप से अविकसित, पीड़ित शोषित जाति की गणना होती है। प्राचीन भारतीय समाज में दलितों की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी किन्तु मध्यकाल में मानवतावादी संतो ने दलितों के लिए चेतना जगायी थी। अंग्रेजी शासनकाल में शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार मानवातावादी महापुरुषों एवं सामाजिक संस्थाओं के समाज सुधार कार्यों द्वारा दलितों के उत्कर्ष का प्रयत्न किया गया था। स्वतंत्रता के बाद संविधान के द्वारा दलित वर्ग को विशेषाधिकार प्रदान किये गये है। दलित वर्ग आज अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गया है। आज साहित्य के द्वारा भी

दलितों के उपेक्षित, शोषित, पीड़ित जीवन का चित्रण किया जाता है तथा उनको अपने अधिकारों के प्रति जागरुक करने का प्रयास किया गया है। अन्त में कह सकते हैं कि युगों से शोषित, पीड़ित दलित समाज आज प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है। सभी वर्गों के समान दलित वर्ग को भी समाज में महत्वपूर्ण स्थान मिल रहा है जो उनके उज्ज्वल भविष्य के संकेत है।

संदर्भ सूची

1. माता प्रसाद, अंतहीन बेड़ियां, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सम्यक प्रकाशन, 2014 पृष्ठ संख्या 05
2. वही, पृष्ठ संख्या 06
3. माता प्रसाद, तड़प मुक्ति की, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2015 पृष्ठ संख्या 10
4. माता प्रसाद, प्रतिशोध, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सम्यक संस्करण, 2014 पृष्ठ संख्या 11
5. वही, पृष्ठ संख्या 13
6. माता प्रसाद, राजनीतिक दलों में दलित एजेंडा, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या 05
7. माता प्रसाद, दिल्ली की गद्दी पर खुसरो भंगी, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2014, पृष्ठ संख्या 15
8. माता प्रसाद, एकलव्य, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 2012, पृष्ठ संख्या 05/06